International Journal of Humanities and Social Science Invention
(IJHSSI) ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 8 Issue 11 Ser. I || November 2019 || PP 77-80

नई कहानी और अमरकान्त

डॉ. चन्द्रशेखर रावल
ऐसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
सेठ फूलचन्द बागला (पी.जी.) कॉलेज, हाथरस।

भारत की स्वतन्त्रता एक ऐसी विभाजक रेखा के रूप में दिखलाई पड़ती है, जो समाज और साहित्य को देखने का सारा दृष्टिकोण ही बदल देती है। देश की स्वतन्त्रता के पश्चात् जो कुछ घटित हुआ उसकी चर्चा हम यथाप्रसंग करते आये हैं। अमानवीयता, मूल्यांधता, अनैतिकता, तर्कहीनता और निराशा इत्यादि ऐसी प्रवृत्तियाँ हैं, जो स्वतन्त्र भारत में प्रखर हुई। साहित्यकार भी इन स्थितियों से अछूता न था। तब, नये कहानीकारों की रचनाधर्मिता में ये प्रवृत्तियाँ दिखाई देती हैं तो यह अस्वाभाविक नहीं है। वैसे नई कहानी आन्दोलन अनेक प्रवृत्तियों का मंच रहा है। एक ही समय के विभिन्न रचनाकारों की प्रवृत्तियाँ समान नहीं होतीं। प्रत्येक की अपनी एक दृष्टि होती है और वह जैसा देखता है, सोचता है उसी के अनुरूप अभिव्यक्ति देता है। नई कहानी के उन्नायकों मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव और कमलेश्वर की वही दृष्टि नहीं है जो अमरकान्त की है। एक ही समयावधि में रचनारत रहते हुए भी इन रचनाकारों की दृष्टि और संवेदना में बहुत फर्क है। इसी फर्क के चलते अमरकान्त अपने समकालीनों के बीच उपेक्षित रहे, किन्तु उन्होंने किसी से कभी कोई शिकायत नहीं की बल्कि निरन्तर रचनाशील रहकर हिन्दी कहानी को नये आयाम दिये। विजयमोहन सिंह ने अमरकान्त की कहानियों का विश्लेषण करते हुए ठीक ही लिखा है कि– "नई कहानी के अनेक कहानीकारों में आज़ादी के बाद के बदलते हुए हिन्दुस्तान और नये आदमी की सही और प्रामाणिक तस्वीर पेश करने का दावा किया है, लेकिन इस कोशिश में वे या तो अपनी निजी या पारिवारिक ज़िन्दगी प्रस्तुत कर पाए या अपने पूर्वाग्रहों और दिवास्वप्नों में घिरे रहे। जबकि आज़ादी के बाद के सामान्य आदमी को रचनात्मक इतिहास के माध्यम से जानना हो तो अमरकान्त की कहाँनियों से बढ़कर प्रामाणिक दस्तावेज़ और कोई नहीं मिल सकता; व्यक्तियों, परिवारों, राजनैतिक तथा सामाजिक संस्थाओं– सबकी आन्तरिक और अन्तर्विरोधों से भरी स्थितियों का खाका जिस तरह अमरकान्त अपनी कहानियों में खींचते हैं और उस विद्रूप–भरे माहौल को जिस नाटकीयता से व्यंजित करते हैं, उसमें चमत्कारपूर्ण जटिलता नहीं मिलेगी, लेकिन आज़ादी के बाद आम आदमी की ज़िन्दगी जिन–जिन मोड़ों से गुजरती रही है, उसके सारे घुमाव अमरकान्त की कहानियों में साफ दिखाई पड़ते हैं।"[1]

अमरकान्त मुख्यरूप से निम्न–मध्यवर्गीय जीवन की विसंगतियों और विडम्बनाओं को अपनी रचनाशीलता से अभिव्यक्ति देने वाले कथाकार हैं। नई कहानी के दौर के अन्य कहानीकारों की तुलना में अमरकान्त का दायरा सीमित है। इस सम्बन्ध में उपेन्द्रनाथ 'अश्क' का यह कथन महत्त्वपूर्ण है, जिसमें उन्होंने अमरकान्त की सीमाओं और संभावनाओं की ओर संकेत किया है– "यह ठीक है कि राजेन्द्र यादव जैसा विस्तृत घेरा उनका नहीं है कि एक ओर 'प्रतीक्षा' जैसी कहानी है तो दूसरी ओर 'पास–फेल' जैसी और तीसरी ओर 'टूटना' अथवा 'अभिमन्यु की आत्महत्या' जैसी। न अमरकान्त के पास राकेश के अनुभव का विस्तार है कि जहाँ एक ओर वे 'मलबे का मालिक' जैसी कहानी लिखते हैं तो दूसरी ओर 'मिस्टर भाटिया' और तीसरी ओर 'मन्दी', 'मिस पाल' अथवा 'परमात्मा का कुत्ता' जैसी... लेकिन जैसा कि मैने पहले कहा, अमरकान्त ने अपेक्षाकृत छोटे घेरे में अपने अनुभव की तमाम सम्पुटितता से अपने को अभिव्यक्ति दी है और इसमें कहीं–कहीं वे अपने समकालीनों से आगे चले गये हैं। जैसे–जैसे, समय बीतता जायेगा, मुझे पूरा विश्वास है, अपनी तमाम परिसीमाओं के बावजूद अमरकान्त उत्तरोत्तर चर्चित और प्रतिष्ठित होते जायेंगे और यदि कहीं वे अपने मानसिक द्वन्द्व को झटक कर फिर पहले की तरह लिखने लगें तो उन्हें बहुत आगे निकल जाने से कोई नहीं रोक सकता।"[2]

भले ही अमरकान्त का दृष्टिफलक सीमित हो किन्तु सामान्य जन–जीवन और साहित्य में उनकी गहरी आस्था है। उनकी कहानियाँ अपने समय की किसी भी महत्त्वपूर्ण समस्या को बड़े ही सहज और गहन रूप से उठाती हैं। इस सम्बन्ध में अमरकान्त के बारे में ममता कालिया का यह वक्तव्य द्रष्टव्य है– "जीवन में, जनता में, साहित्य में उनकी गहरी आस्था और दिलचस्पी है। जनता को छूती कोई समस्या उन्हें नगण्य नहीं लगती।... देश में होने वाली बड़ी से बड़ी और बारीक से बारीक रद्दोबदल में वे अपनी भागीदारी परिभाषित व महसूस करते हैं।"[3]

भारत की स्वतन्त्रता के पश्चात् विभाजन की तरह ही साम्प्रदायिक दंगे, बाढ़ और अकाल जैसी भीषण परिस्थितियों से हमें गुजरना पड़ा है। इन समस्याओं को आधार बनाकर नये कहानीकरों ने अनेक कहानियाँ लिखी हैं, किन्तु अमरकान्त की तरह कहानी कहने के ढंग का उनमें अभाव है। साम्प्रदायिक दंगों पर पर आधारित अमरकान्त की 'मौत का नगर' एक ऐसी कहानी है जो अन्य कहानियों के मुकाबले काफी सशक्त और प्रभावोत्पादक है। बाढ़ और अकाल पर भी अमरकान्त ने कहानियाँ लिखी हैं, जिनमें वे नेताओं और प्रशासन की दोहरी नीति का उद्घाटन करते हैं। 'कुहासा' और 'निर्वासित' इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, जिनमें बाढ़ और अकाल से उत्पन्न दारुणता के कारण मनुष्य की पशुवत् जीवन जीने की विवशता को बड़े ही मार्मिक ढंग से चित्रित किया गया है। वस्तुतः दंगे, बाढ़ और अकाल के वातावरण में धनीभूत भय की आक्रान्तता से पहले मनुष्य का पशु में रूपान्तरण और मानवीयता के हल्के से संस्पर्श से पुनः मनुष्य बन जाने का अनुभव अमरकान्त की इन कहानियों को नई कहानी के दौर की अन्य कहानियों से विशिष्ट बनाता है।

वर्तमान समाज व्यवस्था में अर्थ का प्रभाव ऐसा है कि सम्बन्धों की आत्मीयता प्रतिकूल रूप से प्रभावित होती है। अर्थ से जुड़ी बेरोज़गारी की समस्या भी ऐसी ही है। इस समस्या को अमरकान्त ने पूरी रचनात्मक ईमानदारी से अपनी कहानियों में चित्रित किया है। आर्थिक संकट से जूझते हुए परिवारों और टूटते हुए सम्बन्धों का चित्रण तो अमरकान्त करते ही हैं, साथ ही यह भी बताते हैं कि थोड़ा–सा आर्थिक आधार पाकर व्यक्ति अपने टूटे सम्बन्धों से किस प्रकार पुनः भावनात्मक रूप से सम्बद्ध हो जाता है; और यही अमरकान्त की कहानियों की मूल संवेदना है। 'कुहासा' कहानी का दूबर अपने पिता द्वारा घर से भगाये जाने पर यह कहकर शहर चला जाता है कि– ''अब तुम लोग मेरा मरा हुआ मुँह भी नहीं देख सकोगे..'' शहर में वह रोज़गार तलाश करता है और कठोर परिश्रम करके भी अपना पेट नहीं भर पाता। सर्दियों में, कपड़ों के अभाव में उसकी हालत और खराब हो जाती है। ऐसी स्थिति में जब रामचरण जैसे अवसरवादी व्यक्ति ने उसे रिक्शा और मकान का सपना दिखाया तो वह कल्पना करने लगा कि मैं अपने परिवार के लोगों को अपने पास बुला लूँगा और सभी सुखी रहेंगे। ''उसने सोचा कि रिक्शा और मकान मिलने पर वह खूब पैसे कमाएगा। फिर वह अपने माँ–बाप और भाई–बहिनों को अपने पास बुलाएगा। अपने बप्पा से कहेगा– तुम चुपचाप बैठकर आराम करो। तुमने ज़िन्दगी में बहुत तकलीफ सही हैं, अब किसी को गुलामी करने की जरूरत नहीं है। दूबर जब तक ज़िन्दा है, तुम चिन्ता–परवाह न करो, दोनों जून डटकर खाओ और दिन भर बीड़ी–तमाखू और आलू–बैंगन की तरकारी बनाओ, तुम्हारा दूबर किसी चीज की कमी नहीं होने देगा और भी अपने गाँव की और अपने बचपन की उसे न मालूम कितनी बातें याद आने लगीं।''[5]

यहाँ यह सहज ही लक्षित किया जा सकता है कि बेरोज़गारी और आर्थिक कठिनाई के कारण पारिवारिक सम्बन्धों में जो कटुता उत्पन्न हुई थी, वह थोड़ा सा आर्थिक आधार अथवा रोज़गार का आश्वासन पाते ही विलुप्त हो गई और व्यक्ति अपने को पुनः परिवार से जुड़ा हुआ महसूस करने लगा। बेरोज़गारी की यातना वर्तमान युग की ऐसी निर्मम सच्चाई है जिससे शिक्षित युवा वर्ग सर्वाधिक प्रभावित है। 'इण्टरव्यू' नामक कहानी में राशनिंग विभाग में साठ रुपये प्रतिमाह की क्लर्की के एक पद के लिए सैकड़ों उम्मीदवार इण्टरव्यू में सम्मिलित होने के लिए आते हैं किन्तु बहुत प्रतीक्षा के बाद दो चार का इण्टरव्यू सम्पन्न होने के पश्चात् जो सूचना आती है, वह वस्तुतः पूँजीवादी व्यवस्था पर तीखा व्यंग्य होने के साथ–साथ हमारे देश की अफसरशाही के खोखलेपन को भी उजागर करती है– ''यह सूचित करते हुए हमें खुशी हो रही है कि हमने इस जगह के लिए एक योग्य व्यक्ति को चुन लिया है। इस हालात में अब और लोगों का इण्टरव्यू लेना संभव नहीं था। अब शाम हो गयी है। आप लोग जिस तरह यहाँ कष्ट करके आये और शान्तिपूर्वक खड़े रहे, उसके लिए हम आपको धन्यवाद देते हैं, साथ–ही–साथ यह भी आश्वासन देते हैं कि भविष्य में और जगहें खाली होने पर आप सबको मौका दिया जाएगा।''[6]

इसी तरह अमरकान्त की 'डिप्टी कलक्टरी' कहानी को लिया जा सकता है, जहाँ बेरोज़गारी की यातना अकेले नारायण ही नहीं बल्कि पूरा का पूरा परिवार झेल रहा है। नारायण के पिता शकलदीप बाबू का सच हमारे देश के अधिकाँश मध्यवर्गीय परिवारों का सच है, जो सामर्थ्यवान न होते हुए भी महत्त्वाकाँक्षा की ऊँची–ऊँची उड़ाने भरते हैं। शकलदीप बाबू के समक्ष जब डिप्टी कलक्टरी का परिणाम आता है और नारायण का नाम योग्यता सूची में बहुत नीचे होता है तो उनकी दशा दयनीय हो जाती है ''शकलदीप बाबू का चेहरा फक पड़ गया। उनके पैरों में जोर नहीं था और मालूम पड़ता था कि वह गिर जायेंगे। जंगबहादुर सिंह तो मन्दिर में चले गये। लेकिन वह कुछ देर तक वहीं सिर झुका इस तरह खड़े रहे, जैसे कोई भूली बात याद कर रहे हों। फिर वह चौंक पड़े और अचानक उन्होंने तेजी से चलना शुरू कर दिया। उनके मुँह से धीमे स्वर में तेजी से शिव–शिव निकल रहा था। आठ–दज गज आगे बढ़ने पर उन्होंने चाल और तेज कर दी, पर शीघ्र ही बेहद थक गये और एक नीम के पेड़ के नीचे खड़े हो हाँफने लगे।''[7] ''शकलदीप बाबू की यह करुण–कथा वस्तुतः व्यवस्था में उत्पन्न विकृतियों का ही प्रतिफल है। 'डिप्टी कलक्टरी' कहानी का मूल्यांकन करते हुए सुरेन्द्र चौधरी ने लिखा है– 'डिप्टी कलक्टरी विकास के अन्तर्विरोधों का खाका भी नहीं है। और न केवल एक वैचारिक व्यंग्य मात्र है। उसकी तदर्थता भी सीमित नहीं है। वह एक विकासशील माने जाने वाले राष्ट्र के राष्ट्रकर्मी की सम्पूर्ण स्थिति है! इस अर्थ में अमरकान्त बहुत दूर का लक्ष्य साधते हैं, दूर मार करते है। अगर किसी समाज की उपलब्धियाँ प्रथमतः उस समाज के लोगों में रचनात्मक कार्य का परिणाम होती हैं तो उसके बाधक तत्त्वों का भोक्ता प्राणी कम रचनात्मक पीड़ाओं का भागीदार नहीं रह जाता। 'डिप्टी कलक्टरी' किसी समाज की उपलब्धि न भी हो तब भी उसके साथ जुड़ी बाप की महत्त्वाकाँक्षाएँ एकबारगी ही अप्रासंगिक नहीं हो जातीं। बेटे और बाप ने नज़रिये का द्वन्द्व उसे गहरा अर्थ प्रदान करता है। इसी भावभूमि पर आकर यह कहानी महज़ रेखाचित्र नहीं रह जाती। वह एक पूरे समकालीन समाज में युवक कर्मी की उपराम व्यथा बन जाती है।''[8]

अमरकान्त की इन कहानियों में बेरोज़गारी की यातना और उससे उत्पन्न मनःस्थिति तथा प्रशासनिक भ्रष्टाचार आदि का समग्र व सजीव चित्रण हुआ है। ऐसा नहीं है कि बेरोज़गारी जैसी व्यापक और गंभीर समस्या पर अन्य नये कहानीकारों ने उदासीनता दिखाई हो। नई कहानी के अन्तर्गत बेरोज़गारी की समस्या से सम्बन्धित अनेक कहानियाँ लिखी गयीं हैं। उषा प्रियम्वदा की 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल', कमलेश्वर की 'देवा की माँ' व 'आसक्ति', मोहन राकेश की 'रोज़गार' व 'जख्म' और निर्मल वर्मा की 'माया का मर्म' व 'लन्दन की एक रात' इत्यादि कहानियाँ महत्त्वपूर्ण हैं, जिनमें बेरोज़गारी की त्रासदी सर्वत्र पुंजीभूत है। लेकिन इन कहानियों का दुर्बल पक्ष यह है कि ये बेरोज़गारी के दूरगामी, परिणामों की ओर संकेत नहीं कर पाती, जैसा कि अमरकान्त की कहानियाँ करती हैं।

प्रेम, यौन–कुण्ठाओं और स्त्री–पुरुष सम्बन्धों पर नये कहानीकरों ने काफी लिखा है, लेकिन अमरकान्त ने इस विषय को यथार्थ की भूमि पर बहुत व्यापक और संयत ढंग से चित्रित किया है। डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव ने ठीक ही लिखा है– "एक ऐसे समय में जब आधी संख्या नये कथाकार स्त्री–पुरुष–सम्बन्धों की कुछ सीमित विडम्बनाओं के चित्रण

में संलग्न हैं, अमरकान्त की कहानियों के विषय और चरित्र अनुभव और वास्तविकता के विस्तार में दूर तक फैले हुए हैं।''[9] इसका एक महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि अमरकान्त अपनी कहानियों के चरित्रों को प्रेम के चक्कर में बहुत असहाय सी स्थिति में दिखाते हैं, उनमें साहस और उत्साह का वह गुण नहीं होता जो प्रेम को एक ठोस आधार देता है। शायद इसीलिए स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों की बारीकियों को भी वे उतनी गहराई से नहीं समझ पाते। राजेन्द्र यादव ने लिखा भी है– "जिस तरह की दम तोड़ स्थितियों का कथाकार अमरकान्त है उनमें प्रेम–प्रेम के पैंतरे या स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों की बारीकियों की गुंजायश कम ही है। कभी कुछ पनपता भी है तो बहुत डरा, सहमा, बीमार और असमर्थ। प्रेमचन्द की तरह इस दिशा में उसके यहाँ एक प्रकार का सन्नाटा ही है।''[10]

अमरकान्त की 'जनमार्गी' कहानी में सुशील और बलराज के परस्पर आकर्षण का एक छोटा संयोग है, जो बलराज की स्मृति में अन्त तक जीवित रहता है। 'शुभचिन्ता' नामक कहानी में ज्ञान के प्रति सीता का प्रेमभाव एकपक्षीय है, जो ज्ञान के व्यवहार के परिणामस्वरूप समाप्त हो जाता है। 'काली छाया' में प्रेम अथवा स्त्री–पुरुष सम्बन्ध का अन्त में केवल संकेत ही मिलता है। 'लड़की और आदर्श' नामक कहानी में रूपवान व बुद्धिशील कमला के प्रति नरेन्द्र के भावनात्मक रुझान को प्रेम नहीं कहा जा सकता, वह मात्र आकर्षण है, जिसे वह अपनी अयोग्यता और कायरता के कारण अन्ततः झुठला देता है। 'लड़का–लड़की' के चन्दर का तारा के प्रति भी आकर्षण–भाव ही है, जिसके मूल में स्वयं को समाज के विरुद्ध किसी नायक की तरह स्थापित करने की झूठी लालसा है। लेकिन जब समाज की ओर से इस सम्बन्ध का कोई विरोध नहीं होता दिखलाई देता, तो तारा और उसका प्रेम उसे धोखा लगता है। 'विजेता' तथा 'पलाश के फूल' में स्त्री–पुरुष का सम्बन्ध वासनापूर्ण है, जो एक तरह का धोखा ही है। 'मकान' कहानी का नायक मनोहर अपनी पत्नी से अत्यन्त प्रेम करने की चाह तो रखता है किन्तु आर्थिक अभावों के चलते उससे छल करता है तथा इस छल के कारण वह अपराधबोध से ग्रसित हो जाता है। 'असमर्थ हिलता हाथ' नामक कहानी में लक्ष्मी की पुत्री मीना और दिलीप के बीच प्रेम तो है किन्तु वह अनेक उपक्रमों के उपरान्त सफल नहीं हो पाते। इस कहानी का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति की निर्णय क्षमता को लाचार बनाने वाली उस व्यवस्था पर प्रहार करना है, जो व्यक्ति को लगभग व्यक्तित्वहीन बना देती है। 'केले, पैसे और मूंगफली' नामक कहानी में अवश्य पति–पत्नी के स्वस्थ प्रेम का दर्शन होता है। वस्तुतः अमरकान्त ने मुख्य रूप से निम्न–मध्यवर्ग को अपनी कहानियों का विषय बनाया है, जहाँ अस्तित्व को बचाये रखने का संघर्ष प्रतिपल चलता रहता है। ऐसी स्थिति में प्रेम से अधिक महत्त्वपूर्ण अस्तित्व को बचाये रखना होता है। इसके बावजूद 'असमर्थ हिलता हाथ' जैसी कहानियाँ महत्त्वपूर्ण हैं, जिनमें प्रेम के अंकुरण, चेष्टाओं एवं विभिन्न मनोदशाओं का अंकन कहानीकार की कथा–प्रतिभा और सूक्ष्म–निरीक्षण क्षमता को प्रकट करता है।

जिस प्रकार नये कहानीकारों ने यथार्थ चित्रण के नाम पर रचनाओं में अपशब्दों का प्रयोग किया, वैसा अमरकान्त ने नहीं। इसे अमरकान्त की कायरता, पलायनवादिता और संकोच न जाने क्या–क्या कहा गया, किन्तु हमारी दृष्टि में यह अमरकान्त का रचनात्मक संयम है, जो विलक्षण है। 'म्यान की दो तलवारें' नामक कहानी के एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जायेगी– "गन्दी–गन्दी बातें करने में तो उसने सबसे अधिक कमाल हासिल किया। दोस्तों से गालियों में बात करने के अलावा अपनी हर बात में दाल–भात में तरकारी की तरह स्त्री–पुरुष के विभिन्न अंगों के नाम इस अप्रत्याशित और कल्पनातीत निर्लज्जता के साथ लेने लगा कि उसका लोहा मानने के अलावा कोई चारा नहीं रहा गया।''[11] इसे कहते हैं गजब का रचनात्मक संयम! अमरकान्त ने यहाँ बिना अपशब्दों के प्रयोग के वे सारी बात कह दी, जिसे वे पाठक तक संप्रेषित करना चाहते हैं। ऐसे उद्धरण उनकी अनेक कहानियों में मिल जाते हैं, जो नये कहानीकारों के लिए किसी सीख की तरह हैं। मोहन राकेश की 'परमात्मा का कुत्ता' और कृष्णा सोबती की 'यारों के यार' जैसी अनेक नई कहानियों में जिस तरह धड़ल्ले से अपशब्दों का प्रयोग हुआ है, उस तरह अमरकान्त के यहाँ नहीं। इस मामले में अमरकान्त का रचनात्मक कौशल और संयम काबिले–तारीफ है। रचना में आक्रोश की अभिव्यक्ति के लिए अथवा किसी चरित्र के स्वभाव को बताने के लिए जिस तरह अपशब्दों का प्रयोग नये कहानीकारों ने किया है, उसी तरह उन्होंने उसके ऐसे अन्तः क्रिया–कलापों का चित्रण किया है जो अश्लीलता की सीमा को छू जाते हैं। चाहे मोहन राकेश की 'फौलाद का आकाश' नामक कहानी का यह प्रसंग हो कि 'शरीर की गोलाइयों को मसलने... दाँत से जगह–जगह... माँस को काटने और मंजिल–दर–मंजिल शारीरिक निकटता की हदें पार करने.....।[12] अथवा निर्मल वर्मा की 'दहलीज' नामक कहानी का यह उद्धरण हो– ''गरदन के नीचे फ्राक के भीतर से ऊपर उठती हुई कच्ची–सी गोलाइयों में मीठी–मीठी–सी सुइयों...।''[13] इस प्रकार के अनेक चित्रण नई कहानी में देखे जा सकते हैं अथवा कहें कि नये कहानीकार शारीरिकता के ऐसे प्रसंगों के लोभ–मोह से बच नहीं पाते। अमरकान्त यहाँ भी संयम से काम लेते हैं और ऐसे प्रसंगों का संकेत मात्र करके आगे बढ़ जाते हैं। उदाहरण के लिए अमरकान्त की 'प्रियमेहमान' नामक कहानी का अंश प्रस्तुत है, जहाँ बिम्ब के माध्यम से नहाती हुई स्त्री नीलम की कल्पना में खोए नीरज की मनोदशा का वर्णन है– ''गुसलखाने से पानी गिरने की आवाज़, बदन मलने की छपछपाहट और उसके भीतर से उभरती हुई मधुरकण्ठ की गुनगुनाहट सुनाई दे रही थी। उसकी दृष्टि के सामने जल में भीगा एक कमल काँपने लगा। दिमाग में एक खुशबू भर गयी और वह उस खुशबू में स्वयं नहाने लगा।''[14] अमरकान्त के स्थान पर यही प्रसंग यदि कोई अन्य नया कहानीकार लिखता तो उसे नहाती स्त्री के अंग–अंग का सूक्ष्म वर्णन करने का अवसर मिल जाता। लेकिन अमरकान्त की यह संयमित और गंभीर रचनात्मक क्षमता ही उन्हें अन्य समकालीन कहानीकारों से अलग करती है।

यों तो नई कहानी के दौर के शिवप्रसाद सिंह और भैरवप्रसाद गुप्त जैसे आँचलिक कहानीकारों ने कंजड़ों, नटों, डोम, हिजड़ों, सपेरों इत्यादि उपेक्षित जाति के पात्रों को अपनी कहानी का विषय बनाया है, उनके प्रति संवेदनापूर्ण दृष्टिकोण रखा है। इनके प्रति चले आ रहे समाज के उपेक्षाभाव को तोड़ा है, किन्तु ये कहानीकार अमरकान्त के निम्नवर्गीय मेहनत–मजदूरी करने वाले पात्रों– रजुआ, दूबर, मूस, जन्तू व बहादुर की तुलना में अपने पात्रों को वैसी

विशिष्ट संवेदना नहीं दे पाये हैं, जैसी अमरकान्त ने दी है। अमरकान्त की विशिष्टता यह है कि वे इस वर्ग की विसंगति और विडम्बना का तटस्थ चित्रण करके उसके प्रति पाठक के मन में करुणा पैदा कर देते हैं। इन पात्रों को लेकर वे किसी प्रकार की भावुकता का प्रदर्शन नहीं करते बल्कि निर्मम तटस्थता ही उनके चित्रण में दृष्टिगोचर होती है। उनकी यह तटस्थता "कसाई की ठंडी निगाहों की नहीं, डॉक्टर की तटस्थ दृष्टि की याद दिलाती है।''[15] ऐसे पात्रों के प्रति करुणा का भाव अमरकान्त की कहानियों में चित्रित नहीं, बल्कि व्यंजित होता है। कहानीकार की तटस्थता पात्र के प्रति करुणा को पाठक के मन में और अधिक गहरा देती है। 'बहादुर' और 'मूस' कहानी में कहानीकार नौकर बहादुर के प्रति निर्मम तटस्थता को प्रकट करता है, किन्तु अन्त तक आते–आते बहादुर के भाग जाने पर वह भाव–प्रवण हो जाता है। बहादुर के भाग जाने के बाद जब यह पता चलता है कि मेहमानों के रुपये उसने नहीं चुराये और घर से भी कुछ चुराकर नहीं ले गया उल्टे अपना वेतन भी छोड़ गया है। तदुपरान्त वाचक बहादुर के सामान की ओर देखता है– "मैंने आँगन में नज़र दौड़ाई। एक ओर स्टूल पर उसका बिस्तरा रखा था। अलगनी पर उसके कुछ कपड़े टंगे थे। स्टूल के नीचे वह भूरा जूता था, जो मेरे साले साहब के लड़के का था। मैं उठकर अलगनी के पास गया और उसके नेकर की जेब में हाथ डालकर उसके सामान निकालने लगा– वही गोलियाँ, पुराने ताश की गड्डी, खूबसूरत पत्थर, ब्लेड, कागज की नावें...।''[16] इस कहानी का अन्त वास्तव में इस अनुच्छेद से पहले ही हो जाता है, जब वाचक एक अजीब–सी लघुता का अनुभव करते हुए यह सोचता है कि मैं यदि उसे नहीं मारता तो शायद वह नहीं भागता।

लगभग इसी तरह 'मूस' कहानी का भी अन्त होता है जब उसके हृदय में एक असह्य पीड़ा तथा आकाँक्षा उसे बेचैन करने लगती है– ''मूस का जी न मालूम कैसा होने लगा। उसको लगा कि अगर उसने उस दिन मुनरी को काँवर से मारा न होता तो वह उसे छोड़कर कभी न जाती। उसके हृदय में एक असह्य पीड़ा और आकाँक्षा उमड़–घुमड़ कर उसको बेचौन करने लगी।''[17]

नये कहानीकारों ने भारत के मध्यवर्गीय जीवन पर अनेक कहानियाँ लिखी हैं। चूँकि अधिकांश नये कहानीकारों ने मध्यवर्गीय जीवन को जीया है, इसलिए वे मध्यवर्गीय विषमताओं को यथार्थ रूप में चित्रित करने में सफल रहे हैं। आशा–आकाँक्षा, निराशा, कुंठायें, आपसी सम्बन्ध, बेरोज़गारी, पीड़ा, घुटन, ऊब, अनास्था, मूल्यांधता और संत्रास जैसे मध्यवर्गीय जीवन से सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं का समग्र चित्रण नई कहानी में बहुतायत में है। इन सभी प्रवृत्तियों के मूल में मुख्यरूप से आर्थिक अभाव और संयुक्त परिवारों का विघटन है, जिससे उपर्युक्त सभी समस्याएँ जन्म लेती हैं। कमलेश्वर के शब्दों में– "पश्चिम की कुंठा, कुत्सा, अकेलापन, पराजय और हताशा मेरे लिए चिन्ता का विषय हो सकती हैं, मेरा वर्ण्य नहीं; क्योंकि हमारी कुंठा अकेलापन और अस्तित्व का संकट उससे नितान्त भिन्न है– वह टूटते परिवार से उद्‌भूत है, वह आर्थिक सम्बन्धों के दबाब से अनुस्यूत है।''[19] वस्तुतः नई कहानी इन्हीं प्रवृत्तियों से प्रभावित है और उससे जनित विसंगतियों व विडम्बनाओं का चित्रांकन करती है।

अमरकान्त की कहानियों की मूलसंवेदना मध्यवर्गीय जीवन के आर्थिक अभावों और उसके परिणामस्वरूप टूटते सम्बन्धों से निर्मित है, किन्तु अमरकान्त की कहानियों के पात्र अन्य कहानीकारों के पात्रों की तरह आर्थिक अभावों से तनावग्रस्त होकर आत्मविश्वास नहीं खो देते, बल्कि वे असफल और निराश होते हुए भी प्रयत्न करते हैं– सपने संजोते हैं। अमरकान्त के पात्र पराजित तो होते हैं पर हताश नहीं; अपने असम्भव से सपनों के सहारे वे स्थिति की भयावहता को भूल जाना चाहते हैं, किन्तु वास्तविकता उनके सपनों को तार–तार कर देती है। इस दृष्टि से अमरकान्त की 'सप्ताहांत' व 'छिपकली' जैसी कहानियाँ उल्लेखनीय हैं। अमरकान्त के पात्र वास्तविकता एवं प्रयासों की व्यर्थता को पहचानते हैं, शायद इसलिए कहीं–कहीं वे निष्क्रिय से लगते हैं; किन्तु वे अपने भविष्य के सुखद स्वप्नों के कल्पनालोक को नहीं छोड़ते। भविष्य के प्रति उनका उत्साह बना रहता है।

संदर्भ :

1- कथा समय, पृष्ठ संख्या–31–32
2- वर्ष–1 : अमरकान्त, पृष्ठ संख्या–294
3- वही, पृष्ठ संख्या–104
4- अमरकान्त की सम्पूर्ण कहानियाँ (खण्ड–2), पृष्ठ संख्या–150
5- वही, पृष्ठ संख्या–158–59
6- वही, (खण्ड–1), पृष्ठ संख्या–8
7- वही, पृष्ठ संख्या–88
8- वर्ष–1 : अमरकान्त, पृष्ठ संख्या–147
9- वही, पृष्ठ संख्या–165
10- वही, पृष्ठ संख्या–195
11- अमरकान्त की सम्पूर्ण कहानियाँ (खण्ड–1), पृष्ठ संख्या–122
12- मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या–27
13- मेरी प्रिय कहानियाँ–निर्मल वर्मा, पृष्ठ संख्या–15
14- अमरकान्त की सम्पूर्ण कहानियाँ (खण्ड–2), पृष्ठ संख्या–60
15- वर्ष–1 : अमरकान्त, 'अमरकान्त एक अस्तित्ववादी कथाकार' नामक राजेन्द्र यादव का लेख, पृष्ठ संख्या–192
16- अमरकान्त की सम्पूर्ण कहानियाँ (खण्ड–1), पृष्ठ संख्या–249
17- वही, पृष्ठ संख्या–181
18- वर्ष–1 : अमरकान्त, पृष्ठ संख्या–193
19- माँस का दरिया (आत्मकथा), पृष्ठ संख्या–9